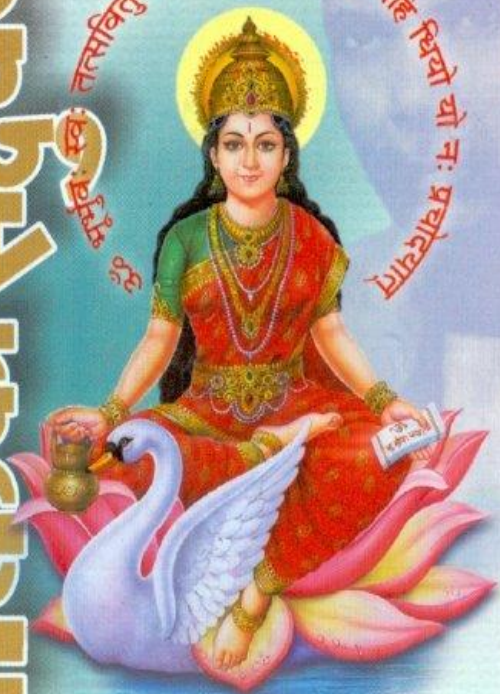


शक्ति का सद्पथोत्तर

गायत्री मंत्र के **स** अक्षर की व्याख्या

स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्



● पं. श्रीराम शर्मा आचार्य

शक्ति का सदुपयोग



गायत्री का तीसरा अक्षर 'स' शक्ति की प्राप्ति और उसके सदुपयोग की शिक्षा देता है—

सत्तावन्तस्ताथा शूराः क्षत्रिया लोकरक्षकाः ।

अन्याया शक्ति संभूतान ध्वंसयेयुहि व्यापदा ॥

अर्थात्—सत्ताधारी, शूरवीर तथा संसार के रक्षक क्षत्रिय अन्याय और अशक्ति से उत्पन्न होने वाली आपत्तियों को नष्ट करें।

क्षत्रियत्व एक गुण है। वह किसी वंश विशेष में न्यूनाधिक भले ही मिलता हो, पर किसी एक वंश या जाति तक ही सीमित नहीं हो सकता। क्षत्रियत्व के प्रधान लक्षण हैं। शूरता अर्थात्— धैर्य, साहस, निर्भयता, पुरुषार्थ, दृढ़ता, पराक्रम आदि। ये गुण जिसमें जितने न्यूनाधिक हैं, वह उतने ही अंश में क्षत्रिय है।

शारीरिक प्रतिभा, तेज, सामर्थ्य, शौर्य, पुरुषार्थ और सत्ता का क्षात्रबल जिनके पास है, उनका पवित्र कर्तव्य है कि वे अपनी इस शक्ति के द्वारा निर्बलों की रक्षा करें, ऊपर उठाएँ तथा अन्याय, अत्याचार करने वाले दुष्ट प्रकृति के लोगों से संघर्ष करने में अपने प्राणों का भी मोह न करें।

शक्ति और सत्ता ईश्वर की कृपा से प्राप्त होने वाली एक पवित्र धरोहर है, जो मनुष्य को इसलिए दी जाती है कि वह उसके द्वारा निर्बलों की रक्षा करे। जो उसके द्वारा दुर्बलों को सहायता पहुँचाने के बजाय उलटा उनका शोषण, दमन, त्रास, उत्पीड़न करता है, वह क्षत्रिय नहीं असुर है। सामर्थ्य का आसुरी उपयोग

करना उस महाशक्ति का प्रत्यक्ष अपमान है और इस अपमान का फल वैसा ही भयंकर होता है जैसा महाकाली से लड़ने वाले महिषासुर आदि का हुआ था। भूतकाल में शक्ति का दुरुपयोग बहुत बढ़ गया था, जिसके फल से पिछले कुछ वर्षों में अनेक सत्ताधारियों का पतन हो चुका है।

शक्ति की आवश्यकता

जीवन एक प्रकार का संग्राम है। इसमें घड़ी-घड़ी में विपरीत परिस्थितियों से, कठिनाइयों से लड़ना पड़ता है। मनुष्य को अपरिमित विरोधी तत्त्वों को पार करते हुए अपनी यात्रा जारी रखनी होती है। दृष्टि उठाकर जिधर भी देखिए उधर ही शत्रुओं से जीवन घिरा हुआ प्रतीत होगा। “दुर्बल, सबलों का आहार है।” यह एक ऐसा कड़ुआ सत्य है जिसे लाचार होकर स्वीकार करना ही पड़ता है। छोटी मछली को बड़ी मछली खाती है, बड़े वृक्ष अपना पेट भरने के लिए आस-पास अनेक छोटे पौधों की खुराक झपट लेते हैं और वे बेचारे छोटे पौधे मृत्यु के मुख में चले जाते हैं। छोटे कीड़ों को चिड़ियाँ खा जाती हैं और उन चिड़ियों को बाज आदि बड़ी चिड़ियाँ मार खाती हैं। गरीब लोग अमीरों द्वारा, दुर्बल, बलवानों द्वारा सताये जाते हैं। इन सब बातों पर विचार करते हुए हमें इस निर्णय पर पहुँचना होता है कि यदि सबलों का शिकार होने से पहले, उनके द्वारा नष्ट किए जाने से अपने को बचाना है तो अपनी दुर्बलता को हटाकर इतनी शक्ति तो कम से कम अवश्य ही संचय करनी चाहिए कि चाहे कोई यों ही चट न कर जावे।

रोगों के कीटाणु जो इतने छोटे होते हैं कि आँखों से दिखाई ही नहीं पड़ते, हमारे स्वास्थ्य को नष्ट कर डालने और मार डालने के लिए चुपके-चुपके प्रयत्न करते रहते हैं। हमारे शरीर में उन्हें थोड़ी भी जगह मिल जाय तो बड़ी तीव्र गति से वे हमें बीमारी और मृत्यु की ओर खींच ले जाते हैं। जरा सा मच्छर मलेरिया का उपहार लिए हुए पीछे फिरा करता है, मक्खियाँ हैजा की भेंट लिए तैयार खड़ी हैं। बिल्ली घर में से खाने-पीने की चीजें चट करने के लिए, चूहा कपड़े काट डालने के लिए, बंदर बरतन उठा ले जाने के लिए तैयार बैठा है। बाजार में निकलिये दुकानदार खराब माल देने, कम तौलने, दूने पैसे वसूल करने की घात लगाए बैठा है। गठकटे, ठग, चोर, उचक्के अपना-अपना

शक्ति का सदुपयोग / २

दाव देख रहे हैं, ढोंगी, मुफ्तखोर अपना जाल अलग ही बिछा रहे हैं। चोर, गुंडे, दुष्ट अकारण ही जलते, दुश्मनी बांधते और नुकसान पहुँचाने का प्रयत्न करते हैं। हितू-संबंधी भी अपने-अपने स्वार्थ साधन की प्रधानता से ही आपसे हित या अनहित घटाते-बढ़ाते रहते हैं।

चारों ओर मोर्चाबंदियाँ बंधी हुई हैं। यदि आप सावधान न रहें, जागरूकता से काम न लें, अपने को बलवान साबित न करें तो निस्संदेह इतने प्रहार चारों ओर से होने लगेंगे कि उनकी चोटों से अपने को बचाना कठिन हो जायगा। ऐसी दशा में उन्नति करना, आनंद प्राप्त करना तो दूर, शोषण, अपहरण, चोट और मृत्यु से बचना मुश्किल होगा। अतएव सांसारिक जीवन में प्रवेश करते हुए इस बात को भली प्रकार समझ लेना और समझकर गांठ बांध लेना चाहिए कि केवल जागरूक और बलवान व्यक्ति ही इस दुनियाँ में आनंदमय जीवन के अधिकारी हैं। जो निर्बल, अकर्मण्य और लापरवाह स्वभाव के हैं, वे किसी न किसी प्रकार दूसरों के द्वारा चूसे जाएँगे और आनंद से वंचित कर दिए जाएँगे। जिन्हें अपने स्वाभाविक अधिकारों की रक्षा करते हुए प्रतिष्ठा के साथ जीने की इच्छा है, उन्हें अपने दुश्मनों से सजग रहना होगा, उनसे बचने के लिए बल एकत्रित करना होगा।

जब तक आप अपनी योग्यता नहीं प्रकट करते, तब तक लोग अकारण ही आपके रास्ते में रोड़े अटकाएँगे, किंतु जब उन्हें यह मालूम हो जायगा कि आप शक्ति संपन्न हैं तो वे जैसे अकारण दुश्मनी ठानते थे, वैसे ही अकारण मित्रता करेंगे। बीमार के लिए पौष्टिक भोजन विषतुल्य होता जाता है, किंतु स्वस्थ मनुष्य को बल प्रदान करता है। जो सिंह रास्ता चलते सीधे-साधे आदमियों को मारकर खा जाता है, वही सिंह सरकस मास्टर के आगे दुम हिलाता है और उसकी आज्ञा का पालन करता हुआ, बहुत बड़ी आमदनी कराने का साधन बन जाता है।

अच्छे स्वास्थ्य वाले को बलवान कहते हैं, परंतु आज के युग में वह परिभाषा अधूरी है। इस समय शरीर का बल, पैसे का बल, बुद्धि का बल, प्रतिष्ठा का बल, साथियों का बल, साहस का बल यह सब मिलकर एक पूर्ण बल बनता है। आज के युग में बलवान वह है जिसके पास उपरोक्त छह बलों

शक्ति का सदुपयोग / ३

में से कई बल हों; आप अपने शरीर को बलवान बनाइए, परंतु साथ-साथ अन्य पाँच बलों को भी एकत्रित कीजिए। किसी के साथ बेइंसाफी करने में इन बलों का उपयोग करें, ऐसा हमारा कथन नहीं है। परंतु जब आपको अकारण सताया जा रहा हो तो आत्मरक्षा के लिए यथोचित रीति से इनका प्रयोग भी कीजिए जिससे शत्रुओं को दुस्साहस न करने की शिक्षा मिले। बलवान बनना पुण्य है क्योंकि इससे दुष्ट लोगों की कुवृत्तियों पर अंकुश लगता है और दूसरे कई दुर्बलों की रक्षा हो जाती है।

शक्ति बिना मुक्ति नहीं

एक महात्मा का कथन है—“सत्य ही शक्ति है, इसलिए शक्ति ही संत्य है।” अविद्या, अंधकार और अनाचार का नाश सत्य के प्रकाश के द्वारा ही हो सकता है। शक्ति की विद्युत धारा में ही वह शक्ति है कि वह मृतक व्यक्ति या समाज की नसों में प्राण संचार करे और उसे सशक्त एवं सचेत बनाए। शक्ति एक तत्व है जिसको आह्वान करके जीवन के विभिन्न विभागों में भरा जा सकता है और उसी अंग में तेज एवं सौंदर्य का दर्शन किया जा सकता है। शरीर में शक्ति का आविर्भाव होने पर देह कुंदन जैसी चमकदार, हथौड़े जैसी गढ़ी हुई, चंदन जैसी सुगंधित एवं अष्ट धातु सी नीरोग बन जाती है। बलवान शरीर का सौंदर्य देखते ही बनता है। मन में शक्ति का उदय होने पर साधारण से मनुष्य कोलंबस, लेनिन, गांधी, सनयातसेन जैसी हस्ती बन जाते हैं और ईसा, बुद्ध, राम, कृष्ण, मुहम्मद के समान असाधारण कार्य अपने मामूली शरीरों के द्वारा ही करके दिखा देते हैं। बौद्धिक बल की जरा सी चिनगारियाँ बड़े-बड़े तत्त्वज्ञानों की रचना करती हैं और वर्तमान युग के वैज्ञानिक आविष्कारों की भौतिक चमत्कारिक वस्तुओं के अनेकानेक निर्माण कर डालती हैं। अधिक बल का थोड़ा सा प्रसाद हमारे आस-पास चकाचौंध उत्पन्न कर देता है। जिन सुख-साधनों के स्वर्गलोक में होने की कल्पना की गई है, जैसे के बल से वे इस लोक में भी प्रत्यक्ष देखे जा सकते हैं और संगठन बल अहा ! वह तो गजब की चीज है। ‘एक और एक मिलकर ग्यारह’ हो जाने की कहावत पूरी सचाई से भरी हुई है। दो व्यक्ति यदि सच्चे दिल से मिल जाएँ तो उनकी शक्ति ग्यारह गुनी हो जाती है। सच्चे कर्मवीर थोड़ी संख्या में भी आपस में मिलकर काम करें तो वे आश्चर्यजनक

शक्ति का सदुपयोग / ४

काम कर सकते हैं। कलियुग में तो संघ को ही शक्ति कहा गया है। निस्संदेह गुटबंदी, गिरोहबंदी, एका, मेल, संगठन एक जादू है, जिसके द्वारा संबंधित सभी व्यक्ति एकदूसरे को कुछ देते हैं और उस आदान-प्रदान से उनमें से हर एक को बल मिलता है।

आत्मा की मुक्ति भी ज्ञान, शक्ति एवं साधना की शक्तियों से ही होती है। अकर्मण्य और निर्बल मन वाला व्यक्ति आत्मोद्धार नहीं कर सकता है और न ईश्वर को ही प्राप्त कर सकता है। लौकिक और पारलौकिक सब प्रकार के दुःख-द्वंद्वों से छुटकारा पाने के लिए शक्ति की ही उपासना करनी पड़ेगी। निस्संदेह शक्ति के बिना मुक्ति नहीं मिल सकती, अशक्त मनुष्य तो दुःख-द्वंद्वों में ही पड़े-पड़े बिलबिलाते रहेंगे और कभी भाग्य को, कभी ईश्वर को, कभी दुनियाँ को दोष देते हुए झूठी विडंबना करते रहेंगे। जो व्यक्ति किसी भी दिशा में महत्त्व प्राप्त करना चाहते हैं, उन्हें चाहिए कि अपने इच्छित मार्ग के लिए शक्ति संपादन करें।

(१) सच्ची लगन और (२) निरंतर प्रयत्न यही दो महान साधनाएँ हैं, जिनसे भगवती शक्ति को प्रसन्न करके उनसे इच्छित वरदान प्राप्त किया जा सकता है। आपने अपना जो भी कार्यक्रम बनाया हो, जो भी जीवनोद्देश्य बनाया हो, उसे पूरा करने में जीजान से जुट जाइए। सोते-जागते उसी के संबंध में सोच-विचार करते रहिए और आगे का रास्ता तलाश करते रहिए। परिश्रम! परिश्रम! परिश्रम! और परिश्रम!! आपकी आदत में शामिल होना चाहिए, मत सोचिए कि अधिक काम करने से आप थक जाएँगे। वास्तव में परिश्रम एक स्वयं चालक शक्ति है, अपनी बढ़ती हुई गति के अनुसार कार्यक्षमता उत्पन्न कर लेती है। उदासीन, आलसी और निकम्मे व्यक्ति दो घंटा काम करके एक पर्वत पार कर लेने की थकान अनुभव करता है, किंतु उत्साही, उद्यमी और अपने कार्य में दिलचस्पी लेने वाले व्यक्ति सोने के समय को छोड़कर अन्य सारे समय लगे रहते हैं और जरा भी नहीं थकते। सच्ची लगन, दिलचस्पी, रुचि और झुकाव एक प्रकार का डायनुमा है, जो काम करने के लिए क्षमता की विद्युत शक्ति हर घड़ी उत्पन्न करता रहता है।

शक्ति का सदुपयोग / ५

स्मरण रखिए कि आपका कोई भी मनोरथ क्यों न हो, शक्ति द्वारा ही पूरा हो सकता है। इधर-उधर बगलें झांकने से कुछ भी प्रयोजन सिद्ध नहीं होगा, दूसरों के सहारे सिर भिगोने पर तो निराशा ही हाथ लगती है। अपने प्रिय विषय में सफल होने के लिए अपने पाँवों पर उठ खड़े हूजिए, उसमें सच्ची लगन और दिलचस्पी पैदा कीजिए एवं मशीन की तरह जीतोड़ परिश्रम के साथ काम में जुट जाइए, अधीर मत हूजिए, शक्ति की देवी आपके साहस की बार-बार परीक्षा लेगी, बार-बार असफलता और निराशा की अग्नि में तपावेगी, असली-नकली की जांच करेगी। यदि आप कष्ट, कठिनाई, असफलता, निराशा, विलंब आदि की परीक्षा में उत्तीर्ण हुए तो वह प्रसन्न होकर प्रकट होगी और इच्छित वरदान ही नहीं, वरन उससे भी कई गुना फल प्रदान करेगी।

एक बार, दो बार नहीं, हजार बार इस बात को गिरह बाँध लीजिए कि 'शक्ति के बिना मुक्ति नहीं।' दुःख-दारिद्र्य की गुलामी से छुटकारा शक्ति-उपार्जन किए बिना कदापि नहीं हो सकता। आप अपने लिए कल्याण चाहते हैं तो उठिए, शक्ति को बढ़ाइए, बलवान बनिए, अपने अंदर लगन, कर्मण्यता और आत्मविश्वास पैदा कीजिए, तब आप अपनी सहायता खुद करेंगे तो ईश्वर भी आपकी सहायता करने के लिए दौड़ा-दौड़ा आएगा।

शक्ति का अपव्यय मत करो

ऐसे बहुत ही कम सौभाग्यशाली व्यक्ति निकलेंगे जिन्हें शक्ति जन्मजात मिली हो। अधिकांश मनुष्यों को धीरे-धीरे शक्ति अभ्यास द्वारा ही प्राप्त होती है और उसका संचय करने से ही वे शक्तिशाली बन सकते हैं।

हमारी शक्ति के विकास के तीन द्वार हैं—मन, वचन और काया। इन्हीं के द्वारा हम कोई कार्य करने में समर्थ होते हैं, पर हमने अपनी शक्ति को अनेक कार्यों में बिखेरे रखा है, इसी से हम अपने आप को कमजोर समझते हैं। यह तो मानी हुई बात है कि कोई वस्तु चाहे कितनी ही ताकतवर क्यों न हो, टुकड़े कर देने पर वह जितने भागों में विभक्त हुई है, शक्ति का बल भी उतने ही अंशों में कम हो जाएगा। इसी प्रकार हम अपने मन को अनेक संकल्पों-विकल्पों में बाँटे रखेंगे तो एक निश्चय पर पहुँचने में कठिनता होगी, किसी भी विषय को गंभीरता से नहीं सोच सकेंगे, उसकी तह तक नहीं पहुँच सकेंगे।

शक्ति का सदुपयोग / ६

इसी प्रकार वचन शक्ति को व्यर्थ की बकवास या वाचालता में लगाए रखेंगे तो उसका कोई असर नहीं होगा। शक्ति इतनी कमजोर पड़ जाएगी कि वह शक्ति के रूप में अनुभव भी नहीं की जाने लगेगी।

इसी प्रकार कायिक शक्ति को भी समझें। कहने का आशय यह है कि हर समय इन विविध शक्तियों का जो अपव्यय हो रहा है, उसकी ओर ध्यान देकर उसे रोका जाय, उनको लक्ष्य में केंद्रित किया जाय, इससे जो कार्य वर्षों में नहीं होता था, वह महीनों, दिनों, घंटों एवं मिनटों में होने लगेगा, क्योंकि जहाँ कहीं उसका प्रयोग होगा पूरे रूप में होगा। अतः उस कार्य की शीघ्र सफलता अवश्यंभावी है।

मनःशक्ति के विकास के लिए मन की दृढ़ता जरूरी है। पचास बातों पर विचार न करके एक ही बात पर विचार किया जाय। व्यर्थ के संकल्प-विकल्प को रोका जाय। वचन शक्ति को प्रबल करने के लिए परिमित बोला जाए, मौन रहने के लिए इधर-उधर व्यर्थ न घूमा-फिरा जाए, इंद्रियों को चंचल न बनाया जाय।

इस तरह तीनों शक्तियों को प्रबल बनाकर और निश्चित कर उन्हें लक्ष्य की ओर करने से जीवन में अद्भुत सफलता मिल सकेगी। लक्ष्य की प्राप्ति ही जीवन की सफलता है।

जड़ पदार्थों के अधिक समय के संसर्ग से हमारी वृत्ति बहिर्मुखी हो गई है। अतः प्रत्येक कार्य एवं कारण का मूल हम बाहर ही खोजते रहते हैं। हम यह कभी अनुभव ही नहीं करते कि आखिर कोई चीज आएगी कहाँ से ? और देगा कौन ? यदि उसमें वह शक्ति है ही नहीं तो हम लाख उपाय करें पर जड़ तो जड़ ही रहेगा। चेतन से संबंधित होकर वह चेतनाभास हो सकता है पर चेतन नहीं, क्योंकि प्रत्येक वस्तु का स्वभाव भिन्न है, जिसका जो स्वभाव है वह उसी रूप में रहता है, स्वभाव छोड़ता नहीं। उपादान नहीं है तो निमित्तादि कारण करेंगे क्या ? अतः कार्य-कारण का संबंध हमें जरा अंतर्मुखी होकर सोचना चाहिए। जो अच्छा-बुरा करते हैं, वह हमी करते हैं, अन्य नहीं और जब कोई विकास होता है, वह अंदर से ही होता है, बाहर से नहीं। निमित्त तभी कार्यकर होते हैं जब उपादान के साथ ही संबंधित हों।

शक्ति का सदुपयोग / ७

हमारी शक्ति का स्रोत हमारे अंदर ही है। अतः उसे बाहर ढूँढ़ते-फिरने से सिद्धि नहीं होगी। मृग की नाभि में कस्तूरी होती है, उसकी सुगंध से वह मतवाला रहता है, पर वह उसे बाहर कहीं से आती हुई मानकर चारों ओर भटकता फिरता है। फिर भी उसे कुछ भी हाथ नहीं आता, इसी प्रकार हम अपने स्वरूप, स्वभाव, गुणों को भूलकर, पराई आशा में भौतिक पदार्थों को जुटाकर उनके द्वारा ज्ञान, सुख, आनंद प्राप्त करने को प्रयत्नशील हैं। यह भ्रम है, इसी भ्रम के कारण अनेकों अनंत काल से सुखप्राप्ति के लिए भौतिक साधनों की ओर आशा लगाए बैठे रहे, पर सुख नहीं मिला। बाह्य जगत से हम इतने घुल-मिल गए हैं कि इससे अन्य एवं भिन्न भी कुछ है, इसकी कल्पना तक हमें नहीं हो पाती। जिन महापुरुषों ने अपनी अनंत आत्मशक्ति को पहिचानकर उसे प्रगट किया है, पूर्ण ज्ञान एवं आनंद के भोगी बने हैं। उनकी सारी चिंताएँ विलीन हो गई हैं, आकुलता-व्याकुलता नष्ट होकर पूर्ण शांति प्रकट हो गई है। उनको इच्छा नहीं, आकांक्षा नहीं, अभिलाषा नहीं, आशा नहीं, चाह नहीं। अतः अंतर्मुखी बनकर अपनी शक्ति को पहिचानना और उसका विकास करना ही हम सब के लिए नितांत आवश्यक है।

शक्ति संचय की प्रणाली

संसार में शक्ति की आवश्यकता और महत्त्व को समझकर बुद्धिमान व्यक्ति सदैव उसका संचय करने में तत्पर रहते हैं। कोई जप-तप करके आध्यात्मिक शक्ति उत्पन्न करते हैं, कोई व्यायाम द्वारा शारीरिक शक्ति को बढ़ाते हैं, कोई तरह-तरह की विधाओं और कलाओं का अभ्यास करके बौद्धिक शक्ति को तीक्ष्ण करते हैं। सारांश यह है कि प्रत्येक व्यक्ति को संसार में सफलता प्राप्त करने के लिए शक्ति संचय की आवश्यकता पड़ती है। निर्बलता एक बहुत बड़ा पातक है। अशक्त व्यक्ति अपना बुरा प्रभाव जिन निकटवर्ती एवं कुटुंबियों पर डालते हैं, उनकी मनोवृत्ति भी उसी सांचे में ढलती है। इस प्रकार यह छूत की बीमारी एक से दो में, दो से दस में और दस से सैकड़ों में फैलती चली जाती है। कायर, आलसी, निकम्मे, निर्बल, भिखारी, दीन, दासवृत्ति के लोग अपने समान औरों को भी बना लेते हैं।

शक्ति का सदुपयोग / ८

निर्बल व्यक्ति जीवन भर दुःख भोगते हैं, जिसका शरीर निर्बल है, उसे बीमारियाँ सताती रहेंगी। सांसारिक सुखों से उसे वंचित रहना पड़ेगा। इंद्रियाँ साथ न देंगी तो सुखदायक वस्तुएँ पास होते हुए भी उनके सुख को प्राप्त न किया जा सकेगा। जो आर्थिक दृष्टि से निर्बल है, वह जीवनोपयोगी वस्तुएँ जुटाने में सफल न हो सकेगा, सुखी और सफल मनुष्यों के समाज में उसे दीन, हीन, गरीब समझकर तिरस्कृत किया जायगा। अनेक स्वाभाविक आकांक्षाओं को उसे मन मारकर मसलना पड़ेगा।

संसार में पाप, अनीति एवं अत्याचार की वृद्धि का अधिकांश दोष निर्बलता पर है। कमजोर भेड़ और बकरियों को मांसाहारी मनुष्य और पशु उदरस्थ कर जाते हैं। पर भेड़िये का मांस पकाने की किसी की इच्छा नहीं होती। कमजोरी में एक ऐसा आकर्षण है कि उससे अनुचित लाभ उठाने की हर एक को इच्छा हो आती है। नन्हें-नन्हें अदृश्य रोग कीटाणु जो हवा में उड़ते फिरते हैं उन्हीं पर आक्रमण करते हैं, जिन्हें कमजोर देखते हैं। हम अपने चारों ओर आँख फैलाकर देख सकते हैं कि कमजोर पर हर कोई हमला करने की सोचता है। जैसे गंदगी इकट्ठी कर लेने से मक्खियाँ अपने आप पैदा हो जाती हैं या दूर-दूर से इकट्ठी होकर वहीं आ जाती हैं। इसी प्रकार कमजोरों से अनुचित लाभ उठाने के लिए घर के पास-पड़ोस के तथा दूर देश के व्यक्ति एकत्रित हो जाते हैं या वैसे लोग पैदा हो जाते हैं। यदि कमजोरी का अंत हो जाय तो अत्याचार या अन्याय का भी अंत निश्चित है।

दुर्बल मनुष्य स्वयं अपने आप में स्वस्थ विचारधारा नहीं कर सकता। कारण कितने ही हैं जैसे—(१) शारीरिक दृष्टि से कमजोर व्यक्ति के मस्तिष्क में पर्याप्त खून नहीं पहुँचता, इसीलिए वह जरा सी बात में उत्तेजित, चिंतित, भयभीत, कातर एवं किंकर्तव्यविमूढ़ हो जाता है। ऐसी अस्थिर अवस्था में मस्तिष्क सही निर्णय नहीं कर सकता, वह अंधकारपूर्ण पथ की ओर अग्रसर हो जाता है। (२) पुरुषार्थ शक्ति के अभाव में वह अभीष्ट वस्तुओं को बाहुबल से प्राप्त नहीं कर सकता, पर इच्छा उसे सताती है। इस इच्छापूर्ति के लिए वह अधर्म पूर्वक भोग वस्तुओं, संपदाओं को प्राप्त करने के लिए प्रवृत्त होता है। (३) अपनी हीन दशा और दूसरों की अच्छी दशा देखकर उसके मन में एक

कसक, आत्मग्लानि, कुढ़न एवं ईर्ष्या उत्पन्न होती है। ऐसी स्थिति में दुर्भाग्य के निराशाजनक भाव या प्रतिहिंसा के घातक भाव मस्तिष्क में उठते रहते हैं। (४) अभावों के कारण जो कठिनाइयाँ उठानी पड़ती हैं, उनसे विचलित होकर मनुष्य अधर्म पर उतारू हो जाता है। (५) निर्बलता एक प्रकार का रोग है। उस रुग्ण अवस्था में विचार भी रोगी हो जाते हैं, उच्चकोटि के आध्यात्मिक विचार उस अवस्था में नहीं रह पाते। शास्त्रकार कहते हैं—“क्षीणानराः निष्करुणा भवन्ति” अर्थात् दुर्बल मनुष्य निर्दयी हो जाते हैं।

इन कारणों से स्पष्ट हो जाता है कि भौतिक उन्नति ही नहीं, आध्यात्मिक उन्नति के लिए भी बलवान बनना आवश्यक है। एक प्रसिद्ध कहावत है कि “शक्ति का प्रयोग करने के लिए शक्ति का प्रदर्शन जरूरी है।” प्रकृति का, मनुष्यों का, रोगों का, शैतान का आक्रमण अपने ऊपर न हो, इसको रोकने का एकमात्र तरीका है कि हम अपने शारीरिक, बौद्धिक, आत्मिक बल को इतना बढ़ा लें कि उसे देखते ही आक्रमणकारी पस्त हो जाएँ। बल का संचय अनेक आने वाली विपत्तियों से अनायास ही बचा देता है। सबलता एक मजबूत किला है जिसे देखकर शत्रुओं के मनसूबे धूल में मिल जाते हैं।

शाक्त लोग अष्टभुजी दुर्गा की पूजा करते हैं। भवानी शक्ति की मूर्तियों में हम उनकी आठ भुजाएँ देखते हैं। इनका तात्पर्य है कि आठ साधन हैं—(१) स्वास्थ्य, (२) विद्या, (३) धन, (४) व्यवस्था, (५) संगठन (६) यश, (७) शौर्य, (८) सत्य, इन आठों के सम्मिलन से एक पूर्ण शक्ति बनती है। इन शक्तियों में से जिसके पास जितना भाग होगा, वह उतना ही शक्तिवान समझा जाएगा।

(१) स्वास्थ्य की महत्ता हम सब जानते हैं कि वह धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष का मूल है। अस्वस्थ मनुष्य तो इस पृथ्वी का एक भार है जो दूसरों के कष्ट का कारण बनकर अपनी सांस पूरी करता है, सच्चे जीवन का स्वाद लेने से और मनुष्यता के उत्तरदायित्वों को पूरा करने से वह सर्वथा वंचित रह जाता है। किसी मार्ग में उन्नति करना तो दूर, उसे प्राणधारण किए रहना भी बड़ा कठिन हो जाता है। स्वास्थ्य सर्वप्रथम और सर्वोपरि बल है। इस बल के बिना अन्य सब बल निरर्थक हैं। इसलिए स्वस्थता की ओर सबसे अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है।

अस्वस्थ होने के थोड़े से कारण हैं। यदि हम उनकी ओर सतर्क रहें तो बीमारी और कमजोरी से बचकर स्वाभाविक स्वस्थता प्राप्त कर सकते हैं। स्वास्थ्य की ओर पर्याप्त ध्यान न देना, निरोगता में पूरी दिलचस्पी न लेना, तंदुरुस्ती के खराब होने का सबसे बड़ा मूल कारण है। रुपया कमाने में, कारोबार-व्यापार में या अन्यान्य अनेक कामों में जितनी पैनी दृष्टि से होशियारी और दिलचस्पी से काम करते हैं यदि उसका दसवां भाग भी तंदुरुस्ती की ओर ध्यान दिया जाय तो दुर्बल होने की नौबत ही न आवे। आमतौर से लोग शरीर को आराम देने और सजाने की तो फिकर करते हैं, इंद्रिय भोगों के साथ धन जुटाते हैं, पर यह नहीं सोचते हैं कि चिरस्थायी स्वास्थ्य और दीर्घजीवन किस प्रकार प्राप्त हो सकता है। यदि हम धनी बनने की इच्छा की भाँति स्वस्थ एवं दीर्घजीवी बनने की भी इच्छा करें तो अवश्य ही सफल मनोरथ हो सकते हैं। धनी बनने से स्वस्थ बनना सुगम है।

स्वाद, फैशन या आराम की ओर ध्यान न देकर आरोग्य की दृष्टि से हमें अपना जीवनक्रम बनाना चाहिए। प्रातःकाल जल्दी उठना, रात को जल्दी सोना, नियमित व्यायाम, त्वचा को खूब रगड़-रगड़कर पूरा स्नान, मालिश, मलों की भली प्रकार सफाई, चटोरपन को तिलांजलि देकर सात्विक मन से खूब चबाकर, प्रसन्नतापूर्वक कम भोजन करना। सामर्थ्य के अनुसार श्रम, चिंता से बचाव, वीर्य रक्षा आदि बातों में सावधानी बरती जाय तो स्वस्थता परछाँई की भाँति साथ रहेगी। तंदुरुस्ती हकीम, डाक्टरों की दुकानों में या रंग-बिरंगी शीशियों में नहीं है वरन आहार-विहार की सात्विकता एवं सावधानी में है। आडंबरी, कृत्रिम, चटोरे, प्रकृति विरुद्ध, आलसी रहन-सहन से हम रोगी बनते हैं, उसका परित्याग करके यदि सीधा, सादा, सरल और प्रकृति अनुकूल जीवनक्रम बनाया जाय तो स्वस्थता निश्चित हमारे साथ रहेगी।

(२) विद्या के दो विभाग हैं— एक शिक्षा, दूसरी विद्या। सांसारिक जानकारी को शिक्षा कहते हैं जैसे— भाषा, भूगोल, गणित, इतिहास, चिकित्सा, व्यापार, शिल्प, साहित्य, संगीत, कला, विज्ञान, नीति, न्याय व्यवस्था आदि। विद्या मनुष्यता के कर्तव्य और उत्तरदायित्व को हृदयंगम करने को कहते हैं।

शक्ति का सदुपयोग / ११

धर्म, अध्यात्म, शिष्टाचार, सेवा, पुण्य, परमार्थ, दया, त्याग, सरलता, सदाचार, संयम, प्रेम, न्याय, ईमानदारी, ईश्वरपरायणता, कर्तव्य भावना प्रभृति वृत्तियों का जीवन में घुल-मिल जाना विद्या है। शिक्षा और विद्या दोनों को ही प्राप्त करने का प्रयत्न करना चाहिए। शिक्षा से सांसारिक जीवन की श्रीवृद्धि होती है और विद्या से आत्मिक जीवन में सुसंपन्नता आती है।

बौद्धिक विकास के लिए जिज्ञासा की सबसे अधिक आवश्यकता है जिसके मन में जानने की इच्छा होती है, उसके मन में अनेकों तर्क-वितर्क उठते हैं। चिंतन, मनन और विवाद करने में जिसे रस आता है, जो अपनी जानकारी बढ़ाने के लिए प्रयत्नशील रहता है, जिसे ज्ञान संग्रह का शौक है, जो ज्ञानवान बनने के महत्त्व और आनंद से परिचित है, वह नित्यप्रति अधिक ज्ञानवान होता चला जाएगा। ज्ञानवान बनने के अनेकों साधन उसे पग-पग पर प्राप्त होते रहेंगे। मूढ़मति मनुष्यों को जहाँ कोई खास बात दिखाई नहीं पड़ती, जिज्ञासु व्यक्ति की सूक्ष्म दृष्टि वहाँ भी बहुत सी जानने योग्य बातें दूढ़ निकालती है। ज्ञानवान बनने की तीव्र आकांक्षा हुए बिना मस्तिष्क की वे सूक्ष्म शक्तियाँ जाग्रत नहीं हो सकतीं, जिनके आधार पर शिक्षा और विद्या की प्राप्ति हुआ करती है। “आथातो ब्रह्म जिज्ञासा” के सूत्रकार ने ज्ञान साधना का प्रथम उपाय जिज्ञासा को बताया है। जिज्ञासु होना विद्वान होने का पूर्व रूप है।

पर्यटन, यात्रा, समाचार पत्रों को पढ़ना, विचारपूर्ण पुस्तकों का अध्ययन, सत्संग, आमलोगों की मनोवृत्तियों का अध्ययन, घटनाओं पर विचार और उनका निरूपण एवं अनुभव संपादन में रुचि लेने वाले मनुष्य बुद्धिमान हो जाते हैं। जो अपनी भूलों को दूढ़ने और सही निष्कर्ष तक पहुँचने के लिए हठधर्मी से बचाकर अपने मस्तिष्क को खुला रखते हैं, वे आवश्यक एवं उपयोगी ज्ञान को पर्याप्त मात्रा में एकत्रित कर लेते हैं। समर्थक और विरोधी दोनों तथ्यों को समझने और उनकी विवेचना करने के लिए जो लोग प्रस्तुत रहते हैं। वे श्रम से, अज्ञान से बचकर वास्तविकता तक पहुँच जाते हैं। अपनी जानकारी की अल्पता को समझना और अधिक मात्रा में एवं अधिक वास्तविक ज्ञान को प्राप्त करने की निरंतर चाह रखना मनुष्य को क्रमशः ज्ञानवान बनाती जाती है। ज्ञानवृद्धि को प्राप्त करने के अवसरों को जो लोग तलाशते रहते हैं

शक्ति का सदुपयोग / १२

और वैसे अवसर मिलने पर उनका समुचित लाभ उठाते हैं, उनकी विद्या बढ़ती जाती है।

(३) धन-समय के प्रभाव से आज पैसे का मनुष्य जीवन में महत्त्वपूर्ण स्थान है। मनुष्य की लघुता, महानता अब पैसे के पैमाने से नापी जाने लगी हैं। पैसे के द्वारा सब सुख-सामग्रियाँ, सब प्रकार की योग्यता और शक्तियाँ खरीद ली जाती हैं। आज जो अनुचित और अत्यधिक महत्त्व पैसे को प्राप्त है, उसकी ओर ध्यान न दिया जाय तो इतना तो मानना ही पड़ेगा कि पैसे की आवश्यकता हर एक को है। भोजन, वस्त्र एवं मकान के लिए पैसे की जरूरत पड़ती है। अतिथि सत्कार, परिवार का भरण-पोषण, बच्चों की शिक्षा, विवाह, चिकित्सा, दुर्घटना, अकाल, आपत्ति, यात्रा आदि के लिए थोड़ा-बहुत पैसा हर सद्गृहस्थ के पास रहना आवश्यक है।

धन उपार्जन की अनेकों प्रणाली संसार में प्रचलित हैं। उनमें से व्यापार, उत्पादन एवं निर्माण की प्रणाली सबसे उत्तम है। शिल्प, वाणिज्य, कला-कौशल, कृषि, गौपालन, दलाली के द्वारा आसानी से पैसा पैदा किया जा सकता है। नौकरी बिना पूँजी वाले और ढीले स्वभाव वालों का सहारा है। ऐसे ही किसी उत्तम कार्य से जीविका उपार्जित करनी चाहिए। न्यायोचित आधार पर समुचित जीविका प्राप्त कर लेना कुछ कठिन नहीं है।

थोड़े प्रयत्न में अधिक धन कमाने के लिए चोरी, डकैती, लूट, रिश्वत, ठगी, उठाईगीरी, बेईमानी, धोखा, मिलावट, विश्वासघात, जुआ, सट्टा, लाटरी, अन्याय, शोषण, अपहरण आदि नीच-निंदित मार्गों का आश्रय ग्रहण करते हैं। इस प्रकार का धन कमाने में लोकनिंदा, राजदंड, शत्रुता, घृणा, प्रतिहिंसा का भय तो प्रत्यक्ष ही है। इसके अतिरिक्त इस प्रकार झटके का पैसा बुरी तरह अपव्यय होता है। जो पैसा पसीना बहाकर, किफायतशारी से नहीं जमा किया गया है, उसके खर्च होने में कुछ दरद नहीं होता। चोर, जुआरी, ठग इस हाथ विपुल धन कमाते हैं और उस हाथ होली में जलाकर स्वाहा कर देते हैं। इस प्रकार के अपव्यय से अनेक पाप, दुर्गुण एवं बुरे उदाहरण उत्पन्न होते हैं।

इन सब बातों पर ध्यान रखते हुए परिश्रमपूर्वक ईमानदारी के साथ उचित मार्गों से धन कमाना चाहिए और किफायतशारी से कुछ बचाने का प्रयत्न करना

चाहिए। सही मार्ग से धनी बनना प्रशंनीय है। धन को जोड़-जोड़कर विशाल राशि जमा करने में नहीं वरन उसका ठीक समय पर आवश्यक एवं उचित उपयोग कर लेने में बुद्धिमानी है। धन को विवेकपूर्वक कमाना चाहिए और विचारपूर्वक खर्च करना चाहिए। तभी धन की शक्ति का वास्तविक लाभ प्राप्त किया जा सकता है।

(४) व्यवस्था-बहुत बड़ी शक्ति है। बड़ी-बड़ी सफलताएँ प्राप्त करने के लिए मनुष्य को अच्छा व्यवस्थापक होना चाहिए। जो व्यक्ति कार्य को करने का समुचित प्रबंध कर सकता है, वह बहुत बड़ा जानकार है। धनी, विद्वान और स्वस्थ पुरुष अनेक स्थानों पर असफल रहते देखे गए हैं, पर चतुर प्रबंधक स्वल्प साधनों से बड़े-बड़े कार्यों के लिए संरजाम जुटा डालते हैं और अपनी हिम्मत, चतुरता, बुद्धिमत्ता एवं व्यवस्था के बल पर उन्हें पूरा कर लेते हैं।

(१) दूसरों पर प्रभाव डालना, (२) उपयोगी मनुष्यों का सहयोग एकत्रित करना, (३) काम की ठीक योजना बनाना, (४) नियमित कार्य प्रणाली का संस्थापन करना, (५) रास्ते में आने वाली कठिनाइयों का निराकरण करना। यह पाँच गुण व्यवस्थापकों में देखे जाते हैं। वे मधुर भाषण, शिष्टाचार, सद्व्यवहार, लोभ, भय आदि से दूसरों को प्रभावित करना जानते हैं। अनुपयोगी अयोग्य लोगों की उपेक्षा करके काम के आदमियों को सहयोग में लेते हैं, लाभ और हानि के हर एक पहलू का वर्तमान परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए अनुभव और आंकड़ों के आधार पर सूक्ष्म दृष्टि से विचार करने के पश्चात वे अपने काम की योजना बनाते हैं। समय की पाबंदी, नियमितता, ठीक समय पर ठीक कार्य करना, स्वच्छता, निरालस्यता एवं जागरूकता उनके स्वभाव का एक अंग बन जाती है। दोषों को वे बारीकी से ढूँढ़ लेते हैं और उन्हें दूर हटाने के लिए सदा प्रयत्नशील रहते हैं। बदलती हुई परिस्थितियों के कारण जो खतरे आते हैं उन्हें रोकने एवं शमन करने पर उनका पूरा ध्यान रखते हैं। सफल व्यवस्थापक में इस प्रकार के गुण होते हैं, उनकी सूझ-बूझ व्यावहारिक होती है।

निरालस्यता, जागरूकता, स्वच्छता, नियमितता, पाबंदी, मर्यादा का ध्यान रखने से मनुष्य के विचार और कार्य व्यवस्थित होने लगते हैं और वह धीरे-धीरे अपने क्षेत्र में एक व्यवस्थापक बन जाता है। ऐसे आदमी का दुनियाँ लोहा मानती है, सफलता उसका पानी भरती है।

शक्ति का सदुपयोग / १४

(५) संगठन-शास्त्रकारों ने “संघशक्ति कलौयुगे” सूत्र में वर्तमान समय में संघशक्ति, संगठन, एकता को प्रधान शक्ति माना है। जिस घर में, कुटुंब में, जाति में, देश में एकता है, वह शत्रुओं के आक्रमण से बचा रहता है एवं दिन-दिन समुन्नत होता है। फूट के कारण जो बरबादी होती है, वह जग जाहिर है। अच्छे मित्रों का, सच्चे मित्रों का समूह एकदूसरे की सहायता करता हुआ आश्चर्यजनक उन्नति कर जाता है। तनबल, धनबल, भुजबल की भाँति जन-बल भी महत्त्वपूर्ण है। जिसके साथ दस आदमी हैं, वह शक्तिशाली है। जन शक्ति द्वारा बड़े कठिन कार्यों को आसान बना लिया जाता है।

घर में और बाहर हर जगह मित्रता बढ़ानी चाहिए। समानता के आधार पर परस्पर सहायता करने वाला, गुण अपनाना चाहिए, उसे बढ़ाया और मजबूत करना चाहिए। संघशक्ति से, जनबल से, जीवन विकास में असाधारण सहायता मिलती है। संगठित गौओं का झुंड सामूहिक हमला करके बलवान बाघ को मार भगाता है।

आप सामूहिक प्रयत्नों में अधिक दिलचस्पी लीजिए। अकेले माला जपने की अपेक्षा संध्या, भजन, कीर्तनों में सामूहिक रूप से सम्मिलित होना पसंद कीजिए। अकेले कसरत करने की अपेक्षा सामूहिक खेलों में भाग लेना और अखाड़ों में जाना ठीक समझिए। सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक, बौद्धिक एवं मनोरंजन संस्थाओं में भाग लीजिए। यदि आपके यहाँ वे न हों तो स्थापित कीजिए, अपने जैसे समान विचारों के लोगों की एक मित्र-मंडली बना लीजिए और आपस में खूब प्रेमभाव बढ़ा लीजिए। घर में और बाहर सच्ची मैत्री का, एकता का बढ़ाना एक महत्त्वपूर्ण वास्तविक लाभ है।

(६) यश-नीतिकारों का कहना है कि जिसका यश है उसी का जीवन-जीवन है। प्रतिष्ठा का, आदर का, विश्वास का, श्रद्धा का संपादन करना सचमुच एक बहुत बड़ी कमाई है। देह मर जाती है पर यश नहीं मरता। ऐतिहासिक सत्पुरुषों को स्वर्ग सिधारे हजारों वर्ष बीत गए परंतु उनके पुनीत चरितों का गायन कर असंख्यों मनुष्य अब भी प्रकाश प्राप्त करते हैं।

जो व्यक्ति अपने अच्छे आचरण और अच्छे विचारों के कारण, सेवा, साहस, सचाई एवं त्याग के कारण लोगों की श्रद्धा एकत्रित कर लेता है, उसे

बिना मांगे अनेक प्रकार से प्रकट और अप्रकट सहायताएँ प्राप्त होती रहती हैं। यशस्वी व्यक्ति पर कोई संकट आता है तो उसका निवारण करने के लिए अनेकों व्यक्ति आश्चर्यजनक सहायता करते हैं, इसी प्रकार उन्नति के लिए अयाचित सहयोग प्राप्त करते हैं। सुख्याति द्वारा जिन्होंने दूसरों के हृदयों को जीत लिया है, इस संसार में यथार्थ में वे ही विजयी हैं।

प्रतिष्ठा आत्मा को तृप्त करने वाली दैवी संपत्ति है। बाजार में ईमानदारी एवं सचाई के लिए जिसकी ख्याति है, वही व्यापारी स्थायी लाभ कमाता है। यशस्वी पर हमला करके अपने आप को सबकी निगाह में गिरा लेने के लिए कोई बिरले ही दुस्साहस करते हैं। यह यश सद्गुणों से, सत्कार्यों से, सद्विचारों से एवं भीतर-बाहर से विश्वस्त रहने वालों को ही प्राप्त होता है।

(७) शौर्य-साहसी बाजी मारता है। हिम्मत वालों की खुदा मदद करता है। आपत्ति में विचलित न होना, संकट के समय धैर्य न रखना, विपत्ति के समय विवेक को कायम रखना मनुष्य की बहुत बड़ी विशेषता है। बुराइयों के विरुद्ध लड़ना, संघर्ष करना और उन्हें परास्त करके दम लेना शौर्य है। शांति अच्छी है परंतु अशांति का अंत करने वाली अशांति भी शांति के समान ही अच्छी है। कायरता की जिंदगी से मर्दानगी की मौत अच्छी। स्वाभिमान, धर्म और मर्यादा की रक्षा के लिए मनुष्य को बहादुर होना चाहिए।

खतरे में पड़ने का चाव, निर्भीकता, बहादुरी, जोश, यह सब आंतरिक प्रेरक शक्ति के-गरम खून के चिह्न हैं। जो फूँक-फूँककर पाँव धरते हैं, वे सोचते और मौका ढूँढ़ते रह जाते हैं। पर साहसी पुरुष कूद पड़ते हैं और तैरकर पार हो जाते हैं। दबू, डरपोक, कायर, कमजोर, शंकाशील मनुष्य सोचते और डरते रहते हैं, उनसे कोई असाधारण कार्य नहीं हो पाता, यह पृथ्वी वीर भोग्या है। वीर पुरुषों के गले में ही जयमाला पहनाई जाती है। उद्योगी सिंह पुरुष ही लक्ष्मी को प्राप्त करते हैं।

मनुष्य को साहसी होना चाहिए। विपत्ति आने पर शोक, चिंता, भय, घबराहट को हटाकर विवेकपूर्वक उस संकट का समाधान करने के लिए ठीक-ठीक सोच सकने का साहस होना मनुष्यता का लक्षण है। आततायियों से मुठभेड़ करने की बहादुरी होना चाहिए। आगे बढ़ने के मार्ग में जो खतरे हैं

उनसे उलझने में जिसे रस आता है, वह शूरवीर है। जो साहसी, पराक्रमी, कर्मठ और निर्भीक है, वह शक्तिवान है, क्योंकि साहसरूपी प्रचंड शक्ति उसके हृदय में विद्यमान है।

(८) सत्यता- में अकूत बल भरा हुआ है, साँच को कहीं आँच नहीं। सत्य इतना मजबूत है कि उसे किसी भी हथियार से नष्ट नहीं किया जा सकता। जिसके विचार और कार्य सच्चे हैं, वह इस संसार का सबसे बड़ा बलवान है, उसे कोई नहीं हरा सकता। सत्यतापूर्ण हर एक कार्य के पीछे दैवी शक्ति होती है। असत्य के पैर जरा सी बात में हड़बड़ा जाते हैं और उसका भेद खुल जाता है, किंतु सत्य अडिग चट्टान की तरह सुस्थिर खड़ा रहता है। उस पर चोट करने वालों को स्वयं ही परास्त होना पड़ता है।

सदुद्देश्य, सद्भाव, सद्विचार, सत्कर्म, सत्संकल्प चाहे कितने ही छोटे रूप में सामने आवें, यथार्थ में उनमें बड़ी भारी प्रभावशाली महानता छिपी होती है। हजार आडंबरों से लिपटा हुआ असत्य जो कार्य नहीं करता वह कार्य सीधी और सरल सत्यता द्वारा पूरा हो जाता है। सत्यनिष्ठ पुरुष प्रभावशाली, तेजस्वी और शक्तिशाली होता है। जो सत्यनिष्ठ है, मन, कर्म और वचन से सत्यपरायण रहते हैं, उनके बल की किसी भी भौतिक बल से तुलना नहीं की जा सकती है।

शक्ति का दैवी स्रोत

बहुत से व्यक्ति जो अपने को स्वभाव से ही निर्बल और सामर्थ्यहीन समझ लेते हैं, सहज में यह विश्वास कर ही नहीं सकते कि उद्योग करने से हम महान शक्तिशाली हो सकते हैं। वे अपनी वर्तमान दुर्बल अवस्था को देखकर यही विचार करते हैं कि हम तो सदा इसी प्रकार दबे हुए रहने को उत्पन्न हुए हैं। पर यह एक भ्रमजनित धारणा है। प्रत्येक व्यक्ति के भीतर एक ऐसा शक्तिकेंद्र मौजूद है जो उसे इच्छानुसार ऊँचे स्थान पर पहुँचा सकता है, शास्त्र में कहा गया है—

प्रत्येकमस्ति चिच्छक्तिर्जीव शक्ति स्वरूपिणी ।

‘प्रत्येक जीव में चैतन्य शक्ति (आत्मा की अनंत और अपार शक्ति) विद्यमान है।’

शक्ति से ही मनुष्य पहले धर्म प्राप्त करता है, पुनः उसी से अर्थ सिद्ध करते हुए पुण्य संचय करके कामनाओं की पूर्ति करने में समर्थ होता है, अंत में इसी शक्ति से पूर्ण त्याग एवं ज्ञान के द्वारा मोक्ष पा जाता है। अपनी शक्ति के प्रवाह का समुचित प्रयोग करना ही पुरुषार्थ है। इस प्रकार, शक्ति संपन्नता को स्वार्थसिद्धि के विरुद्ध दूसरों के हित में लगाते रहना ही उन्नति-पथ पर बढ़ते जाना है।

कदाचित हमारा जीवन सद्गुणों और सद्भावों से रहित है तो हम शक्ति के सदुपयोग से किसी भी प्रकार के अभाव को दूर कर तुच्छ, अकिंचन से महान हो सकते हैं।

देह, प्राण, इंद्रियाँ मन और बुद्धि के द्वारा दुरुपयोगित शक्ति का सदुपयोग होने के लिए ही पूजा-पाठ, कीर्तन, जप, तप और ध्यान आदि अनेक साधनों का आश्रय लेना पड़ता है।

जिस प्रकार हमारा यह भौतिक शरीर क्षेत्र इसी भूलोक के द्रव्यों से बना हुआ है, उसी प्रकार हमारे प्राणमय, मनोमय और विज्ञानमय क्षेत्र उत्तरोत्तर सूक्ष्मातिसूक्ष्म लोकों के द्वारा निर्मित हैं। प्रत्येक क्षेत्र में भिन्न-भिन्न प्रकार की शक्ति है और अपने-अपने लोकों की दिव्यशक्ति को लेकर प्रत्येक क्षेत्र क्रियाशील हो रहा है। जिस क्षेत्र में क्रिया की प्रधानता रहती है, वही क्षेत्र विशेष शक्ति संपन्न होता है।

स्थूल क्षेत्र में संग्रहीत शक्ति के द्वारा विविध विषय वासनाओं तथा कामनाओं की पूर्ति होती रहती है। इसी प्रकार मनोमय क्षेत्र में केंद्रित शक्ति के द्वारा विविध भाव, इच्छा एवं संकल्प की सिद्धि होती है। इससे भी ऊपर विज्ञानमय क्षेत्र में विकसित शक्ति के योग से अद्भुत प्रतिभायुक्त ज्ञान का प्रकाश होता है। इसी लोक में परमार्थ का पथिक अपनी बिखरती हुई बहिर्मुख शक्ति को अंतर्मुख करते हुए अपने परम लक्ष्य की ओर अग्रसर होने में समर्थ होता है।

जिस प्रकार भौतिक भवन को दूसरे रूप में बदलने के लिए उचित संपत्ति की आवश्यकता है, उसी प्रकार इच्छित रूप में अपने भाग्य भवन को बदलने के लिए भी शक्ति और पुण्य रूपी संपत्ति की आवश्यकता है। तप के द्वारा शक्ति और सेवा के द्वारा पुण्य रूपी संपत्ति प्राप्त होती है। शक्ति के

शक्ति का सदुपयोग / १८

दुरुपयोग से दुर्भाग्य और सदुपयोग से सौभाग्य की प्राप्ति होती है। सांसारिक स्वार्थ को ही सिद्ध करते रहना शक्ति का दुरुपयोग है। लेकिन परोपकार करते हुए अपना परमार्थ सिद्ध कर लेना शक्ति का सदुपयोग है। संसार में आसक्त रहना शक्ति का दुरुपयोग है और त्याग के द्वारा ज्ञान तथा भक्ति में अनुरक्त होना शक्ति का सदुपयोग है। अहंकारपूर्वक अपनी शक्ति से किसी को गिरा देना शक्ति का दुरुपयोग है और गिरे हुए को सरल भाव से तत्परता पूर्वक उठा लेना शक्ति का सदुपयोग है।

संयम साधना के द्वारा शक्ति का विचार करने के लिए, शक्ति के समुचित सदुपयोग की सिद्धि के लिए ही मंदिरों में, तीर्थस्थानों में, शक्तिपीठों में, वनों-उपवनों में समयानुसार जाने की प्रक्रिया हमारे देश में चली आ रही है। ऐसे पावन स्थानों में अपने अंतःक्षेत्रों के भीतर की सुप्त शक्ति सहज प्रयास से जाग्रत हो जाती है।

हम सबको ध्यान देकर निरीक्षण करते रहना चाहिए कि शक्ति का किसी भी क्रिया, चेष्टा, भाव एवं विचार के द्वारा दुरुपयोग हो रहा है अथवा सदुपयोग।

इस प्रकार हम अपनी प्राप्त शक्ति की अधिकाधिक वृद्धि कर सकते हैं। शुद्ध सात्विक आहार और विषय संयम से शारीरिक उन्नति होती है, सद्व्यवहार एवं सद्गुण विकास से मानसिक उन्नति होती है और निष्काम प्रेम एवं सत्य स्वरूप के ध्यान से आत्मोन्नति होती है।

हमें सर्वप्रथम संतों के सत्संग की सर्वोपरि आवश्यकता है, जिससे हम विवेक की दृष्टि प्राप्त करें, तदनंतर हम संयम की साधना धारण करें, क्योंकि बुद्धिमत्तापूर्वक आत्मसंयम से ही शक्ति संपन्न होकर आनंद और परम धाम की प्राप्ति की जा सकती है।

प्रत्येक क्षेत्र में शक्ति की प्राप्ति एवं निर्बलता का अभाव ही मानवी उत्थान अथवा शक्ति का सदुपयोग है। जब हम भय की जगह निर्भय होकर प्रत्येक कठिनाई को परास्त करने में समर्थ हो जाएँ और अपने लक्ष्य की ओर बढ़ते ही चले जाएँ तथा जब हमें सदा शक्ति की महती कृपा का अनुभव होने लगे, तब हम शक्ति का सदुपयोग करने वाले व्यक्ति के रूप में अपने आप को पाकर धन्य हो जाएँगे।

शक्ति का सदुपयोग / ११

शक्ति और आध्यात्मिकता

एकाग्रता में दिव्यशक्तियों के भंडार भरे हुए हैं। सांसारिक जीवन में मन की शक्ति से बड़े-बड़े अद्भुत कर्मों को मनुष्य पूरा करता है। इसी मनःशक्ति को जब बाहर से समेटकर अंतर्मुखी किया जाता है और असाधारण कठिन परिश्रम द्वारा उसको सुव्यवस्थित रूप से आत्मसाधना में लगाया जाता है तो और भी अद्भुत, आश्चर्यजनक परिणाम उपस्थित होते हैं, जिन्हें ऋद्धि-सिद्धि के नाम से पुकारते हैं। निस्संदेह आध्यात्मिक साधना के फलस्वरूप कुछ ऐसी विशेष योग्यताएँ प्राप्त होती हैं जो सर्वसाधारण में नहीं देखी जाती। यदि इस प्रकार का विशेष लाभ न होता तो मनुष्य प्राणी जो स्वभावतः वैभव और आनंद को तलाश करता रहा है। इंद्रिय भोग को त्यागकर योग की कठोर साधनाओं की ओर आकर्षित न होता। सूखी, नीरस, कठोर, अरुचिकर, कष्टसाध्य साधनाएँ करने को कोई कदापि तैयार न होता यदि उसके फलस्वरूप कोई ऊँचे दर्जे की वस्तु प्राप्त न होती।

मूर्ख, अनपढ़, नशेबाज, हरामी और अधपगले भिखमंगों के लिए यह कहा जा सकता है कि यह लोग बिना मेहनत पेट भरने के लिए जटा रखाए फिरते हैं। परंतु सबके लिए ऐसा नहीं कहा जा सकता। विद्या, वैभव, बुद्धि, प्रतिभा और योग्यताओं से संपन्न व्यक्ति जब विवेकपूर्वक सांसारिक भोग विलास से विरत होकर आत्मसाधना में प्रवृत्त होते देखे जाते हैं तो उसमें कुछ विशेष लाभ ही होना साबित होता है। प्राचीन काल में जितने भी तपस्वी हुए हैं और आज भी जो सच्चे तपस्वी हैं, वे विवेक से प्रेरित होकर इस मार्ग में आते हैं। उनकी व्यापार बुद्धि ने गंभीरतापूर्वक निर्णय किया है कि भोग की अपेक्षा आत्मसाधना में अधिक लाभ है। लाभ का लोभ ही उन्हें स्थूल वस्तुओं में रस लेने की अपेक्षा सूक्ष्म संपदाओं का संचय करने की ओर ले जाता है।

जो लोग सच्ची लगन और निष्ठा के साथ आध्यात्मिक साधना में प्रवृत्त हैं, उनका उत्पादन कार्य अच्छी फसल उत्पन्न करता है, उनमें एक खासतौर की शक्ति बढ़ती है, जिसे आत्मबल कहते हैं। यह बल सांसारिक अन्य बातों की अपेक्षा अधिक महत्त्वपूर्ण है। प्राचीनकाल में राजा विश्वामित्र की समस्त सेना और संपदा, तपस्वी वसिष्ठ के आत्मबल के सामने पराजित हो गई तो

शक्ति का सदुपयोग / २०

“धिक बलं क्षत्रिय बलं, ब्रह्म तेजो बलं बलं” कहते हुए विश्वामित्र राजपाट छोड़कर आत्मसाधना के मार्ग पर चल पड़े। राजा की अपेक्षा ऋषि को उन्होंने अधिक बलवान पाया। सांसारिक बल की अपेक्षा आत्मबल को उन्होंने महान अनुभव किया। छोटी चीज को छोड़कर लोग बड़ी की ओर बढ़ते हैं। राज त्यागकर विश्वामित्र का योगी होना इसका ज्वलंत प्रमाण है। गौतम बुद्ध का चरित्र भी इसी की पुष्टि करता है। जो आत्मसाधना में लीन हैं, वे ऊँचे दर्जे के व्यापारी हैं। छोटा रोजगार छोड़कर के बड़ी कमाई में लगे हुए हैं।

शक्ति का हास न होने दीजिए

शक्ति संचय करने वाले साधनों के साथ ही हमको इस बात पर भी दृष्टि रखनी चाहिए कि हमारी शक्ति निकम्मे कामों में खरच न हो। जैसा कहा गया है शक्ति परमात्मा की अमूल्य देन है, जिसका महत्त्व धन से भी बड़ा है, क्योंकि धन का उपार्जन और रक्षा भी शक्ति के द्वारा ही संभव है। पर वर्तमान समय में हमारा जीवन ऐसा बहुमुखी हो गया है और कृत्रिम साधनों तथा अस्वाभाविक रहन-सहन ने ऐसी अव्यवस्था उत्पन्न कर दी है कि हमारी बहुत सी शक्ति निरर्थक कार्यों में नष्ट हो जाती है।

यदि जीवनयापन ठीक तरह किया जाय तथा जीवन-तत्त्वों को ह्रास से बचाया जाय तो मनुष्य दीर्घकाल तक जीवन का सुख लूट सकता है। प्रत्येक व्यक्ति को उन खतरों से सावधान रहना चाहिए जिनसे जीवनशक्ति का ह्रास होता है। सर्वप्रथम मनुष्य की शक्ति का ह्रास करने वाली बात अधिक भोग विलास है। संसार के संमस्त पशु-पक्षियों की प्रजनन शक्ति अत्यंत परिमित है। वे केवल आनंद, क्षणिक वासना के वशीभूत होकर रमण नहीं करते, विशेष ऋतुओं में ही प्रजनन कार्य होता है। प्रकृति उन्हें विवश करती है, तब उनका गर्भाधान होता है। आज के मानव समाज ने नारी को केवल तृप्ति का साधन मात्र समझ लिया है। पति-पत्नी के संयोग की मात्रा अनियमित हो रही है। हम संतानोत्पत्ति का उद्देश्य, आदर्श तथा प्रकृति का आदेश नहीं मान रहे हैं। फलतः समाज में आयुष्यहीन, अकर्मण्य, निकम्मे बच्चे बढ़ रहे हैं। इंद्रियों की चतुरता, कामुकता बढ़ रही है। अधिक भोग विलास से मनुष्य निर्बल होते जा रहे हैं। कामुक और कामुकता में लगे रहने वाले जीव या व्यक्तियों के बच्चे

शक्ति का सदुपयोग / २१

कभी बलवान, आभावान, संयमी, श्रीमान, विचारवान नहीं हो सकते। वीर्य का प्रत्येक बिंदु शक्ति का बिंदु है। एक बिंदु का भी ह्रास नहीं करना चाहते हैं तो भोग विलास से दूर रहिए।

शक्ति का ह्रास अधिक दौड़धूप से होता है। आधुनिक मनुष्य जल्दी में है। उसे हजारों काम हैं। प्रातः से सायंकाल तक वह व्यस्त रहता है। उसका काम ही जैसे समाप्त होने में नहीं आता। बड़े नगरों में तो दौड़धूप इतनी बढ़ गई है कि दम मारने को अवकाश नहीं है, घर के लिए सामान लाता है, बाल-बच्चों को मदरसे भेजता है, अस्पताल से दवाई लाता है। यदि आप व्यापारी हैं तो व्यापार के चक्कर में प्रातः से सायंकाल तक दौड़धूप करते हैं। आज के सभ्य व्यक्ति को शांति से बैठकर मन को एकाग्र करने तक का अवसर नहीं मिलता। संसार के कोने-कोने से अशांति और उद्विग्नता की चिल्लाहट सुनाई दे रही है। चित्त की चंचलता इतनी बढ़ती जा रही है कि हम क्षुब्ध एवं संवेगशील बन रहे हैं। इस दौड़धूप में एक क्षण भी शांति नहीं? यदि हम इसी उद्विग्न एवं उत्तेजित अवस्था में चलते रहें तो मानव जीवन में कैसे आनंद, प्रतिष्ठा एवं शांति पा सकते हैं। हमारे चारों ओर का वायुमंडल जब विशुद्ध है तो आत्मा की उच्चतम शक्ति क्योंकि संपादन कर सकते हैं। जो व्यक्ति शक्ति संचय करना चाहते हैं, उन्हें चाहिए कि अधिक दौड़धूप से बचें, केवल अर्थ उत्पादन को ही जीवन का लक्ष्य न समझें, शांतिदायक विचारों में रमण करें। जिस साधक के हृदय में ब्रह्मनिष्ठा एवं संतोष है, उसकी मुखाकृति दिव्य आलोक से चमकती है। जो ब्रह्म विचार में लगता है, वह अपने आप को निर्बलता, प्रलोभन, पाप से बचाता है।

शक्ति के ह्रास का तीसरा कारण है अधिक बोलना। जिस प्रकार अधिक चलने से जीवन का क्षय होता है, उसी प्रकार अधिक बोलने, बातें बनाने, अधिक भाषण देने, बड़बड़ाने, गाली-गलोज देने, चिढ़कर काँव-काँव करने से लोग फेफड़ों को कमजोर बना डालते हैं। पुनः-पुनः तेज आवाज निकालने से फेफड़ों का निर्बल हो जाना स्वाभाविक है। यही नहीं गले में खराश तथा खुश्की से खांसी उत्पन्न होना स्वाभाविक है। खांसी बनी रहने पर क्षय रोग होकर मनुष्य मृत्यु को प्राप्त होता है। प्रायः देखा गया है कि व्याख्याता, अध्यापक,

लेक्चरार पतले दुबले रहते हैं। यह शक्ति के क्षय का प्रत्यक्ष लक्षण है। अधिक बोलने से शारीरिक शक्ति का ह्रास अवश्यभावी है। यह अपनी शक्ति का अपव्यय है। अधिक बोलने की आदत से मनुष्य बकवासी बनता है, लोग उसका विश्वास नहीं करते, ढपोर शंख कहते हैं। वह प्रायः दूसरों की भली, बुरी, खोटी आलोचना करता है, अनावश्यक बातें बनाता है, निंदा करता है, अपनी गंभीरता खो बैठता है। प्रायः ऐसा करने वालों का आदर कम हो जाता है। शक्ति को अपव्यय से बचाने की इच्छा रखने वालों को चाहिए कि मितभाषी बनें, मृदुभाषी बनें। कम बोलें किंतु जो कुछ बोलें वह मनोहारी और दूसरे तथा अपने हृदय को प्रसन्न करने वाला हो, सारयुक्त हो, शब्द योजना सुंदर हो, प्रेम तथा आनंद का, आदर और स्नेह का परिचायक हो। शक्ति संचय के लिए मितभाषी बनिए। आध्यात्म चिंतन, पठन, अध्ययन, मौन, मितभाषी बनने के सुंदर उपाय हैं।

शक्ति को नष्ट करने के दुष्परिणाम

शक्ति के नाश के अनेक कारणों में विषय-लोलुपता कदाचित सबसे बड़ा कारण है। प्रायः देखा जाता है कि शक्तिसंपन्न व्यक्तियों में काम वासना का विकार विशेष रूप से उत्पन्न हो जाता है, जिसके फलस्वरूप वे अपनी शक्ति को नष्ट कर डालते हैं और दूसरों को भी हानि पहुँचाते हैं।

सौंदर्य, शक्ति, यौवन और धन संसार की चार दिव्य विभूतियाँ हैं। ईश्वर ने इन शक्तियों की सृष्टि इस मंतव्य से की है कि इनकी सहायता एवं विवेकशील प्रयोग के द्वारा मानव धीरे-धीरे उत्थान एवं समृद्धि के शिखर पर पहुँच जाय। वास्तव में इन दैवी विभूतियों के सदुपयोग द्वारा मनुष्य शारीरिक, बौद्धिक एवं मानसिक शक्तियों का चरम विकास कर सकता है। मानव व्यक्तित्व के विकास में ये पृथक-पृथक अपना महत्त्व रखती हैं।

भगवान के गुण, स्वरूप की कल्पना में हम सौंदर्य शक्ति एवं चिर यौवन को महत्ता प्रदान करते हैं। हमारी कल्पना में परमेश्वर सौंदर्य के पुंज हैं, शक्ति के अगाध सागर हैं, चिर युवा हैं, अक्षय हैं। लक्ष्मी उनकी चेरी है। ये ही गुण मानव जगत में हमारी सर्वतोमुखी उन्नति में सहायक हैं। जिन-जिन महापुरुषों को इन शक्तिकेंद्रों का ज्ञान हुआ और जैसे-जैसे उन्होंने इनका विवेकपूर्ण

उपयोग किया, वैसे-वैसे उनकी उन्नति होती गई, किंतु जहाँ इनका दुरुपयोग हुआ, वहीं पतन प्रारंभ हुआ। वह पतन भी इतना भयंकर हुआ कि अंतिम सीमा तक पहुँच गया और उनका सर्वनाश इतना पूरा हुआ कि बचाव संभव न हो सका।

शक्ति का दुरुपयोग मनुष्य को राक्षस बना सकता है। रावण जाति का ब्राह्मण, बुद्धिमान और तपस्वी राजा था, किंतु शक्ति का मिथ्या दंभ उस पर सवार हो गया। पंडित रावण राक्षस रावण बन गया। उसकी वासना उत्तेजित हो गई। जितना उसने वासनाओं की पूर्ति करने का प्रयत्न किया, उससे दुगने वेग से वह उद्दीप्त हुई। शक्ति उसके पास थी। वासना की पूर्ति के लिए रावण ने शक्ति का दुरुपयोग किया। अंत में अपनी समस्त शक्ति के बावजूद रावण का क्षय हुआ। शक्ति के दुरुपयोग से न्याय का गला घुट जाता है, विवेक दब जाता है, मनुष्य को निज कर्तव्य का ज्ञान नहीं रहता, वह मदहोश हो जाता है और उसे सत-असत का अंतर प्रतीत नहीं होता।

गायत्री माता स्वयं शक्ति-स्वरूपिणी है और उसकी उपासना से हम सब प्रकार की शक्तियों को प्राप्त कर सकते हैं। पर शर्त यही है कि जो शक्ति प्राप्त की जाय उसका सदुपयोग ही किया जाय। दुरुपयोग करने से तो उसका परिणाम महा भयानक होता है और उससे हमारा सांसारिक पतन ही नहीं होता वरन हम आध्यात्मिक दृष्टि से भी अत्यंत निम्न स्तर पर पहुँच जाते हैं।



मुद्रक : युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा।